साथ संघर्ष करते हुए उत्पादन और पुनुर्त्पादन की प्रक्रिया शुरू हो चुकी थी। मानव समाज की आवश्यकताओं में वृद्धि हो रही थी। बढ़ी हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मानव समाज में वृद्धि भी जरूरी हो गया था। इसके लिए सामाजिक संसर्ग की आवश्यकता हुई। इसी संसर्ग से मानव समाज की जनसंख्या बढ़ती गई और उत्पादन और पुनुर्त्पादन की प्रक्रिया विकसित होती रही। कृषि संस्कृति के आते-आते पशुपालन युग की संस्कृति के पूर्वाधार पर पितृसत्ता और मातृसत्ता का द्वन्द्व पितृसत्ता की सामाजिक व्यवस्था में रूपांतरित हो चुका था। श्रम का विभाजन हो चुका था। इस श्रम विभाजन के मूल में मानव के क्रियाकलाप के और प्रकृति के साथ संघर्ष में, उत्पादन के क्रियाकलाप में मिथ की संरचना शुरू हो चुकी थी। इसी मिथ से समाज में वर्गभेद होने लगा था। उत्पादन के क्रियाकलाप और अन्य क्रियाकलापों के श्रम में अंतर के लिए मिथ का सहारा लिया जाने लगा था। श्रम विभाजन की इसी प्रक्रिया में भू-दास और भू-स्वामी के वर्ग की मिथकीय रचना हुई। भाववादी विचारकों ने बिना श्रम के अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए एक अलग विचारक वर्ग बनाया। इसी वर्ग के भीतर से भू-स्वामी वर्ग का विकास हुआ और यह सामंत अथवा राजा के रूप में सामाजिक व्यवस्था में रूपांतरित होता गया।

इसी पूर्वाधार के माध्यम से भौतिकवादी विचारकों ने भाववादी विचारकों से अलग हटकर श्रम विभाजन के तीन वर्ग बनाए। पितृसत्ता-उत्पादक वर्ग और इस्टेट (सामंत) वर्ग के विभाजन की रेखा खींची। भाववादियों के अनुसार सामंत 'परमसत्ता' का प्रतिनिधि बन गए। उनका एक समूचा वर्ग तैयार हो गया। पितृसत्ता को उत्पादक श्रम तथा अन्य वर्ग में स्थापित कर दिया और लैंगिक भेद कर मातृशक्ति को दोयम दर्जे का बना दिया। पितृसत्ता ने एकल विवाह के माध्यम से इसे और मजबूती प्रदान की। एंगेल्स ने यह स्पष्ट कर दिया कि दुनिया का पहली दास एकल विवाह से पैदा हुआ। अर्थात् पुरुष की पत्नी दासी हुई और पुरुष अपनी पत्नी का दास स्वामी बन गया। लोक संस्कृति में मातृशक्ति और पितृशक्ति की टकराहाट हर वर्ग और उत्सव की परंपरा में दिखाई देती है। मातृशक्ति पर पितृसत्ता को स्थापित करने के लिए भाववादी विचारकों ने मिथ की ऐसी रचना की कि कल्पना और यथार्थ के द्वन्द्व में कल्पना की विजय पताका फहराने में वे सफल हो गए। प्रकृति को अपने क्रियाकलापों से अपनी आवश्यकता के अनुरूप रूपांतरित करने वाले श्रमजीवी वर्ग की चेतना कल्पना के द्वारा पैदा की जाने अथवा रचना की जाने वाले मिथ के यथार्थ को समझने जानने और परखने में सक्षम नहीं हो सकी। और वह लोक समाज उन मिथकीय पितृशक्ति को अपनी संस्कृति में स्थान देने लगे। किन्तु मातृशक्ति की परंपरा को भी पूरी मजबूती के साथ अपनी संस्कृति का आधार बनाए रखने के लिए संघर्ष करते रहे। यह संघर्ष मानव संस्कृति के विकास की प्रक्रिया में हर कहीं दिखाई देती है।

आदिम मानव मातृसत्ता की पूजा करते थे। उन्हें अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जनसंख्या में वृद्धि की जरूरत पड़ रही थी जो मातृशक्ति के बिना संभव नहीं था। इसी चेतना ने आदिम मानव समाज में योनि पूजा की परंपरा को विकसित किया। कामरूप में योनि पूजा की परंपरा आज भी चल रही है। एकल विवाह और श्रम विभाजन के विकास के दौर ने आर्यों के आगमन के साथ आदिम मानव समाज की परंपरा के समान्तर पितृसत्ता की पूजा और साथ ही साथ लिंग पूजा को विकसित किया। लिंग पूजा के मिथ को इतना अधिक प्रचारित प्रसारित किया गया कि लोक चेतना में भी लिंग पूजा को महत्वपूर्ण स्थान मिलने लगा। पितृसत्ता के समर्थक भाववादी विचारकों ने अपनी कल्पनाशीलता से पितृसत्ता के प्रतीकों की मिथकीय रचना आदिम मानव के प्रकृति की शक्तियों से भय पैदा करने वाली शक्तियों के पूजा की परंपरा में ही तलाशने की कोशिश की, जिससे पितृसत्ता सर्वमान्य हो जाए और मातृसत्ता की आदिम चेतना पर पितृसत्ता की चेतना को लाद दिया जाय। लोक संस्कृति में जिस प्राकृतिक शक्ति, झंझा को बलि देने की परंपरा रही है, जिसके लिए आदिम मानव ने एक सुनिश्चित स्थान तय कर लिया था तथा विकास की प्रक्रिया में किसी पत्थर या पत्थर के कोलाज को झंझा का प्रतीक बनाकर बलि देने की परंपरा विकसित कर ली थी। पितृसत्ता ने झंझा बलि के उस प्रतीकात्मक पत्थर पर शिवलिंग की कल्पना कर उसे न केवल मिथ बना दिया गया वरन् उसे पितृसत्ता के मूल आधार के रूप में मिथ कथाओं की रचना भी कर डाली। इस तरह झंझा को बलि का पत्थर लोक संस्कृति में भी शिवलिंग के रूप में स्थापित हो गया और लोक संस्कृति में लिंग पूजा की मिथकीय परंपरा न केवल शुरू हुई वरन् मजबूत भी होती गई।

लोक संस्कृति में धीरे-धीरे मिथ की पकड़ मजबूत होती गई। उनकी मातृशक्ति की पूजा आराधना को भी मिथ में रूपांतरित किया गया। उत्पादन के लोक के क्रियाकलापों में चेतना को दूर करने की कोशिश की गई। उत्पादन संबंधों का वह वर्ग जो भाववाद की आधार भूमि पर खड़ा होकर भौतिकवाद की आधार भूमि को कमजोर करने का लगातार प्रयास करते रहा और हथियार के रूप में मिथ का इस्तेमाल करता रहा। किन्तु लोक के श्रम की चेतना और भाववादी श्रम विरोधी चेतना के बीच द्वन्द्व होता रहा। कभी द्वन्द्व तेज होता रहा तो कभी धीमा। भाववादी दर्शन ने मानव समाज के सृजन और विकास के लिए मानवीय संसर्ग की चेतना को परम सत्ता द्वारा सृजन की चेतना में रूपांतरित करने के लिए अपनी कल्पना से अर्द्धनारीश्वर के मिथ की रचना की। मिथ के आदिदेव शिव का अर्द्धनारीश्वर रूप तैयार किया गया। तब तक झंझा रूद्र में और रूद्र शिव में बदल चुका था। जिन स्थानों पर झंझा को बलि दी जाती थी, यजुर्वेद के आते-आते उन स्थानों पर शिव कुटी की स्थापना होने लगी थी। जिस झंझा के पत्थर पर शिवलिंग के मिथ की रचना हुई थी उस पत्थर के चारों ओर एक विशेष आकृति में थोड़ा गहरा गड्ढा बनाकर लोक को मिथकीय भाववादी संस्कृति से जोड़ने के लिए, मातृसत्ता और पितृसत्ता के समन्यवादी मिथ की रचना की गई।